शिवस्वरूपा मथरा देवी

लेखिका :

जयकीश्वरी सपरू

शरीरेणार्जुना मनसा विचक्षणा
बुद्ध्या त्रृतम्भरा वक्त्रेण वसुन्धरा ।
हृदया मनीषा वचसा विलासिनी
मथरा भवानी भवभीतिहारिणी ॥

"कमल"

मूल्य : 6/- रुपये

मुद्रक :- ज्योती प्रिंटर्ज, पटोली, जम्मू-7

प्रास्ताविक अनुमोदन

ब्रह्मलीना मथरा देवी (1879-1985 ई०) का लीला-स्थल कश्मीर में प्राय: वेरनाग ही रहा। उन्हें आधुनिक काल की लल-द्यद मानने से कोई अत्युक्ति नहीं होगी। सिद्ध अवस्था में वह श्रीनगर में कई वर्ष रही। वहां उनके शुभ दर्शन पाने का सौभाग्य मुझे कई बार प्राप्त हुआ। जब देवी जी शिवालय में निवास करती थी तो प्रतिदिन सरल पारमार्थिक उपदेश संकीर्तन से आरम्भ करती। उनकी कोकिला-वाणी से भक्तजन अपना सुर मिलाकर प्रेम से गाते :—

शिवाय नमः ओम्, शिवाय नमः ओम्
शिवाय नमः ओम् नमः शिवाय।

यह मनोहर ध्वनि आज तक मेरे कर्ण-प्रान्तों से शब्दायमान होती है। देवी जी के मनोहर उपदेश शास्त्र प्रमाणों से अलंकृत होते थे। उनके कुछ-एक सुन्दर उपदेश आज तक मुझे याद हैं :—

1. परमपिता परमेश्वर को जानने के लिए उनके विषय में ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है :—

वरं शरावहस्तस्य चाण्डालागार वीथिषु।
भिक्षार्थमटनं राम न मौर्ख्यहत जीवितम्।। (यो० वा०)

परमार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिए चण्डाल-बस्ती की गलियों में कच्चा पात्र हाथ में लेकर भिक्षा करना श्रेयस्कर है परन्तु मूर्खता में जीवन नष्ट करना ठीक नहीं है।

2. सत्संग से कभी चूकना नहीं चाहिये :—

सदा सन्तोऽनुगन्तव्यो यद्यप्युपदिशन्ति न।
या हि स्वैरकथास्तेषामुपदेशाः भवन्ति ताः।। (यो० वा०)

सन्तों की सेवा में सदा रहना चाहिये यद्यपि वे कोई विशेष उपदेश न भी करें। जो उनकी अपने व्यवहार की बातें होती हैं उनसे ही बहुत कुछ शिक्षा मिलती है।

3 देवी जी साधारण स्त्री-वर्ग को विशेष रूप से अपने आप को सुरक्षित रहने का आदेश देतीं। उन से अभिमुख हो कर करती—"देखो, स्त्री तो नानवाई से लाई रोटी की तरह रक्षणीय होती है। रोटी को दीवार की मुण्डेर पर रखो तो पक्षी इसके पीछे पडते हैं, आङ्गन में रखो तो कुत्ता-बिल्ली इस पर झपटने को तयार हैं और घर के कमरे में ही खुली रखो तो चूहा-बिल्ली से बच नहीं पाती है। यही हाल नारी का है। शीलवती रहने में ही नारी का बल और उसकी प्रतिष्ठा छिपे होते हैं। लज्जा नारी का भूषण है जो आवश्यक गुण बनकर इसकी रक्षा करने के साथ साथ इस की शोभा को बड़ा देती है।"

4. वह लडकों को छोटी आयु में ही यज्ञोपवीत संस्कार करवाने पर अधिक बल देती थी।

5. उच्च विचार रखने और शुद्ध-सरल व्यवहार करने का लोगों को आदेश देती थी।

मथरा देवी जी ने यह सब कुछ करते हुए भी शिवालय की उस छोटी देवस्थली की जीर्ण-शीर्ण दशा का पुनरुद्धार किया। दीवार बन्धवाकर मन्दिर को सुरक्षित रखा। आज कल यही स्थान श्रीरामकृष्ण आश्रम की देख-रेख में नन्दन-वन के समान बना है।

कई वर्ष बाद देवी जी जब दूसरी बार श्रीनगर आई तो शंकराचार्य पर्वत के पश्चिमीय दामन में स्थित दुर्गानाग की पुण्य-भूमि पर एक कुटिया में कई वर्ष तक निवास किया। वहां भी

भक्तजन उन के दर्शन के लिये जाते और सत्संग लाभ करते थे। श्री 1108 स्वामी शिवरत्नानन्द जी द्वारा स्थापित दुर्गामन्दिर के परिसर में साधु-सन्त देशान्तर से आकर तपस्या तथा उपासना में लीन रहते थे। उन दिनों कश्मीर में 'गुप्तानगुण्ड' के विख्यात सन्त स्वामी आत्माराम जी तथा श्रीनगर के एक गृहस्थी योगी पं० शिवजी चिकन और वेरनाग के सन्त बीरकाक जी आदि इस परिसर में सत्संग तथा परमार्थ ग्रन्थों का अध्ययन करने के लिये सम्मलित होते थे। परन्तु मथरा देवी जी अपनी कुटिया से बाहर नहीं आती। केवल अभ्यास-परायण ही रहती थी। श्रद्धालु भक्तजन दर्शन के लिए उनके पास आते और संक्षेप में परमार्थ विचार की बातों का श्रवण कर कृतकृत्य हो जाते। देवी जी आद्यशंकराचार्य के 'आत्म बोध', महा रामायण-योगवासिष्ठ, श्रीमद्भगवदगीता और चिद्रसपूर्णा लल्लेश्वरी (ललद्यद) से लिये उद्धरणों का अर्थ-विश्लेषण कर श्रोतागण को मुग्ध कर देती। सन्त का लक्षण ही है कि वह

'स्वयं तीर्त्वा परान् तारयति'

अर्थात 'अपना उद्धार कर सर्वजन उपकार में रत होता है।' सिद्धसन्त के विषय में शास्त्र कहता है :--

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था
वसुन्धरा पुण्यवती च तेन।
अपार संसारसमुद्रमध्ये
लीये परेब्रह्मणि यस्य चेतः।

अर्थात 'अपार इस संसार-समुद्र के बीच जिस व्यक्ति का मन परब्रह्म में लीन होता है उसका कुल पवित्र बनता है, उसकी

माता कृतार्थ होती है और सारी पृथ्वी पुण्य से भर जाती है।'

इस प्रकार ब्रह्मलीना भगवती मथरा देवी के इहलोक की पवित्र जीवन झांकी से आत्मा का उद्धार करने के लिये विशेष संकेत मिलते हैं। उनके उपदेशों का प्रचार उनके शिष्य-शिष्याओं द्वारा होने से जन कल्याण में वृद्धि होना अनिवार्य है।

स्वामी विवेकानन्द ने अपने सद्‌गुरु महाराज परमहंस रामकृष्ण देव के उपदेशों को न केवल अपने जीवन में उतार कर दिखाया अपितु भारत से अमरीका, इंगलैण्ड, जापान आदि देशों में जाकर सारे विश्व में फैलाया भी। उन्होंने सर्व-सधारण में अध्यात्म बल जगाने का श्लाघणीय प्रयत्न किया। वेद-उपनिषद् तथा रामायण-महाभारत में दिये संकेतों द्वारा आध्यात्मिक स्वरूप को पहचानने से सच्चा सुख पाने का उपदेश दिया। उन से आज भी सन्तों, नेताओं तथा सर्वसाधारण को प्रेरणा मिलती है। श्रीमती जयकीश्वरी सपरू, शिक्षा-विभाग की एक अवसर प्राप्त प्रिन्सिपल, सम्भवत: इसी उद्देश्य को लेकर अपने सद्‌गुरु महाराज शिवीभूता मथरा देवी जी के जीवन-वर्णन से सामाजिक शिक्षा तथा उनके अध्यात्म-उपदेशों को देश के जन-मन तक पहुंचाना चाहती हैं। इसी उदेश्य से उन्होंने 'शिवस्वरूपा मथरा देवी' के नाम से यह विशद लेख लिखा है। वह अपने ही मनोबल तथा धनबल से यह सन्देश जन-साधारन तक पहुंचाने का प्रयास कर रही हैं। यथार्थ में श्रीमती सपरू जी का यह प्रयत्न और उन की सह-शिष्याओं के श्रद्धा-सुमन जो इस पुस्तिका के अन्त में दिये हैं, सराहनीय हैं।

जानकीनाथ कौल 'कमल'

नम्र निवेदन

काश्मीर की पावन भूमि को संसार में अपने प्राकृतिक सौन्दर्य तथा आध्यात्मिक भावों के लिए प्रसिद्ध होने के अतिरिक्त कई महान् अलौकिक विभूतियों की जन्मभूमि होने का विशेष गौरव प्राप्त है। इस धरती को साधु संतों की भूमि मान कर इसे 'ऋषिवा'र' भी कहा जाता है। इस पवित्र धरती पर कई महान् दिव्य शक्तियों का प्रादुर्भाव हुआ है जिन्होंने समय समय पर अपनी छाप डाली है। अपने भक्तों का उद्धार करके यह महान विभूतियां अपना उद्देश्य पूरा करके परमधाम को सिधारे। उनमें वसुगुप्त, सोमानंद, उत्पलदेव, अभिनवगुप्त, ललद्यद, रुपभवानी और अन्य रहस्यवादी सन्त जैसी महान शक्तियां उल्लेखनीय हैं। उनकी रहस्यमयी गाथाएँ, साधना-क्रम तथा उपदेश लिपिबद्ध हैं जो हमारी संस्कृति की अभिन्न अंग और अमूल्य निधि मानी जाती है।

वर्तमान काल में महा तपस्विनी परम साध्वी श्री मथरा देवी जी के नाम से कौन कश्मीरी हिन्दु परिचित नहीं है। सूर्य और चन्द्रमा की तरह चमकती हुई आध्यात्मिक शक्ति युक्त श्री मथरा देवी जी महाराज का नाम अपना विशेष स्थान रखता है। ऐसी महान् शक्ति की लीलाओं का वर्णन करना मुझ जैसी अकिंचन व्यक्ति के लिए असम्भव है। यह ऐसा प्रयास है जैसे आकाश को वस्त्र से ढ़ांपना। न जाने किस जन्म के पुण्यों के फलस्वरूप मुझे देवी जी महाराज का सामीप्य प्राप्त करने का सौभाग्य मिला था जो उनकी प्रेरणा से ही उनकी जीवनी और उनकी लीलाओं को लिपिबद्ध करने का मैं

यह साहस कर रही हूँ। उसके लिए अपने को असमर्थ पाकर मैंने अपने अहं को देवी जी महाराज के चरणों में समर्पण करके उनके आशीर्वाद से उनकी जीवनी और लीलाओं को एक छोटी सी पुस्तिका का रूप दिया है। इसमें उनके श्रीमुख से निकली वाणी और उपदेश भी लिपिबद्ध किए हुए हैं। यद्यपि उनके अमूल्य उपदेशों का धारा प्रवाह निरन्तर चलता रहता था परन्तु हमारी तुच्छ बुद्धि उन वाक्यों को ग्रहण करने में असमर्थ थी। उनके जीवन काल में उनके चाचा गुरु प्रसिद्ध संत कवि कृष्ण जू राज़दान द्वारा इनकी लीला का वर्णन भी है। देवी जी महाराज की परम शिष्या श्रीमती धनवती दर के अपने स्वर्गीय ससुर जी के सहयोग से देवी जी महाराज के गुणगान की कविताओं का संग्रह भी इस पुस्तिका में सम्मिलित है। विशेषकर मैं श्री पृथ्वीनाथ जी कौल 'वेरनाग निवासी' तथा श्रीमती जयकीश्वरी दर 'रिटाईड प्रिंसिपल' की आभारी हूँ जिन्होंने मुझे इस छोटी सी पुस्तिका के संग्रह करने तथा लिपिबद्ध करने में सहायता करके मेरा उत्साह बड़ाया।

मुझे आदरणीय श्री जानकीनाथ जी कौल 'कमल' के प्रति आभार प्रकट करने में अधिक प्रसन्नता होती है, जिन्होंने मुझे इस पाण्डुलिपि Manuscript को अंतिम तथा पूर्णरूप देने में अपना अमूल्य समय देकर पूरा-पूरा सहयोग दिया। साथ ही इस पुस्तिका की प्रस्तावना लिख कर मुझे प्रोत्साहित किया। 'कमल' जी किसी परिचय के आधीन नहीं हैं। यह काश्मीरी, हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेज़ी भाषा के जाने माने लेखक विद्वान हैं। एक उच्चकोटि के साहित्यकार तथा शास्त्रज्ञ होने के नाते इनके लेख

देश-विदेश की कई मुख्य पत्रिकाओं में छपते रहते हैं। पाठकगण भी इनकी काव्यप्रतिभा तथा भावपूर्ण गम्भीर विचार और लेखन शैली से अत्यंत प्रभावित हैं।

मैं आशा करती हूँ कि देवी जी महाराज के सम्बन्ध में लिखी हुई यह पुस्तिका अत्यंत लाभदायक तथा कल्याणकारी सिद्ध होगी। श्रद्धालु भक्तों के लिए यह एक वरदान स्वरूप होगी।

(श्रीमती) जयकीश्वरी सपरू



ॐ श्री गणेशाय नमः॥

अथ गुरु स्तुतिः॥

ब्रह्मानन्दं परम सुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतम्
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुः साक्षान्महेश्वरः।
गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्री गुरवे नमः॥१॥

चैतन्यं शाश्वतं शान्तं व्योमातीतं निरञ्जनम्।
नादबिन्दुकलातीतं गुरुं नित्यं नमाम्यऽहम्॥
गुरुर्ब्रह्मा० ॥२॥

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥
गुरुर्ब्रह्मा० ॥३॥

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशालाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥
गुरुर्ब्रह्मा० ॥४॥

मामि सतगुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम् ।
शिरसा योगपीठस्थं धर्मकामार्थ सिद्धये ।।
गुरुर्ब्रह्मा ।।५।।

श्री गुरुं परमानन्दं वन्दे आनन्दविग्रहम् ।
यस्य सन्निधिमात्रेण चिदानन्दायते परम् ।।
गुरुर्ब्रह्मा ।।६।।

हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ।
सर्वदेवस्वरूपाय तस्मै श्री गुरवे नमः ।।
गुरुर्ब्रह्मा ।।७।।

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोर्पदम् ।
ज्ञानमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ।।
गुरुर्ब्रह्मा ।।८।।

ज्ञानिनां ज्ञानरूपाय प्रकाशाय प्रकाशिनाम् ।
विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनाम् ।।
गुरुर्ब्रह्मा ।।९।।

पुजितोऽसि मया भक्त्या भगवन् त्वं समादरात् ।
ब्रह्मरूपोऽसि मे स्वान्तः विश्वविश्रान्ति हेतवे ।।
गुरुर्ब्रह्मा ।।१०।।





गुरुदेव नमः गुरुदेव नमः

तुम्हारी महिमा है अपार महा।

तुम ही हरि हो, तुम्ही हर हो
तुम शेष गणेश दिवाकर हो
तुम्हारी महिमा है अपार महा। गुरुदेव नमः०

तुम मात-पिता और भ्राता हो
तुम मुक्ति के भी दाता हो
तुम्हारी महिमा है अपार महा। गुरुदेव नमः०

तुम पूर्ण ज्ञान प्रकाशक हो
घट अंतर भीतर बाहर हो
तुम्हारी महिमा है अपार महा। गुरुदेव नमः०

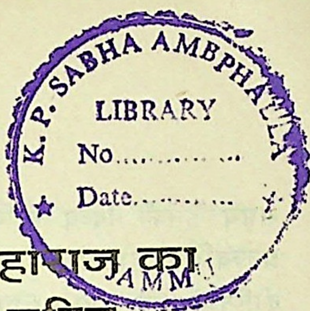
तुम जानत हो सबके मन की
क्यों भूल गए हमरे मन की
तुम्हारी महिमा है अपार महा। गुरुदेव नमः०

प्रभु नैय्या मेरी मंझधार पड़ी
तव कृपा बिना मेरा कौन सही
तुम्हारी महिमा है अपार महा। गुरुदेव नमः०





ॐ श्रीमत् नारायणय नारायणय नारायणय ॐ
शिवस्वरूपभूता मथरा देवी जी महाराज
वेरनाग (काश्मीर)



श्री मथरा देवी जी महाराज का संक्षिप्त जीवन चरित्र

जन्म तथा जीवन आरम्भ

मथुरा देवी जी महाराज का जन्म श्रीनगर से लगभग 70 किलोमीटर की दूरी पर स्थित वेरनाग में भाद्र कृष्ण पक्ष चतुर्दशी संवत् 1938 तदनुसार ईस्वी सन् 1879 को हुआ था। प्राचीन काल में यह स्थान नीलनाग के नाम से भी प्रसिद्ध रहा है। कहा जाता है कि यहां पर नीलमत पुराण की रचना हुई है। यहां पर सदा साधु संतों के आने जाने की चर्चा रहती थी। इसी नीलनाग से निकली हुई वैतस्तिक नील गङ्गा की तटस्थली में सुन्दर रमनीक अपने पैत्रिक घर के पवित्र वातावरण में देवी जी का प्रादुर्भाव हुआ था।

देवी जी महाराज के पिता पंडित हरीराम जी कौल एक धर्मात्मा और परोपकारी सद्ग्रहस्थ थे। देवी जी महाराज की दो बहिनें थीं। उनके एक भाई पंडित गोविन्द कौल, प्रतिष्ठित समाज-सेवी तथा कुशल ग्रहस्थी थे। कहा जाता है कि जब देवी जी के दादा जी का अन्तिम समय निकट आया तो देवी जी को जन्म देने के लिए उनकी माता जी श्रीमती बोन्यमाल को अपने मैके पोंजू गाँव, जो कि वेरनाग से ढेड किलोमीटर की दूरी पर है, भेजने का प्रबन्ध किया गया। प्रभु प्रेरणा से इनका जन्म रास्ते में ही श्मशान - स्थल पर हुआ। कहा जाता है कि इस

समय इनकी दिव्य दीप्ति से श्मशान भूमि का सारा स्थल प्रज्ज्वलित हो उठा। ऐसा भास हुआ जैसे वहाँ का कणकण दीप्तिमान हो रहा था मानो कि साक्षात् शंकर भगवान् का ही जन्म हुआ हो।

त्यागमूर्ती मथरा देवी

चन्द्रकला की तरह बढ़ती हुई यह शंकर स्वरूपा कन्या बाल्यकाल से ही घर के धार्मिक वातावरण में पनपने लगी। दिन-रात भगवत् भजन में लीन अपनी सुध-बुध खोकर केवल शंकर भगवान् की आराधना करती रहती थी। सांसारिक सुखों को क्षणिक जानकर उन्हें तिलांञ्जली देकर एक मात्र साधु सन्तों की सेवा में तत्पर रहने तथा पीडित जनों की सेवा शुश्रूषा करने से उन्हें आनन्द प्राप्त होता था। फोडे फुंसियों से पीडित साधु जनों की सेवा इतनी तन्मयता से करती थी कि खाने पीने की सुध-बुध ही नहीं रहती थी। सांसारिक सुखों को माया का आवरण समझ कर उससे छुटकारा पाने के लिए अलौकिक जीवन बनाने की ओर अग्रसर होना ही इनका ध्येय था। अत: देवीजी बाल्यकाल से ही सतोगुण प्रधान होने के कारण भावी जीवन को उत्कर्ष की ओर ले चलने का प्रयास करती थी। ईश्वर भक्ति से चित्त की वृत्तियों को प्रकाशित करके उनके प्रति विरक्ति का भाव जागृत होना उनके लिए स्वभाविक ही था। लगभग दस वर्ष की आयु में ही इनके मन में वैराग्य वृत्ति का भाव जागृत हो गया था। एक बार अपने ही वंश की एक समवयस्क कन्या को देवी जी ने अपने साथ रखा। वह कन्या जन्मजात नेत्रहीन थी। मथरा

देवी ने अपने सांसारिक बन्धनों से छूटने के लिए तथा ज्ञान प्राप्त करने हेतु उस कन्या से परामर्श किया कि वे दोनों लड़कों का वेष धारण करके घर छोड़कर भाग जाने का प्रयत्न करें। परन्तु देवी जी के माता-पिता को उस नेत्र हीन कन्या के द्वारा इस प्रस्ताव का संकेत मिल गया। लोक लाज तथा मर्यादा-भंग के डर से घर के सदस्यों ने यह प्रयत्न तुरन्त विफल कर दिया।

वैवाहिक जीवन के सुख और भोग को समझने वाली, यह आध्यात्मिक शक्ति की परिपूर्ण राशि सांसारिक जाल को काट कर स्वच्छान्द रूप से आध्यात्मिक क्षेत्र में विचरण करने लगी। एक महान शक्ति, भला संसारिक तथा वैवाहिक जीवन की कैसे चाह रख सकती थी। वैवाहिक जीवन के लिए अनिच्छा होने पर भी केवल सामाजिक प्रथा, मर्यादा तथा लोक लाज के हेतु इनका विवाह संस्कार अनन्तनाग निवासी एक ब्राह्मण घराने में पंडित भगवानदास के साथ सम्पन्न हुआ था। दो वर्ष का यह अल्प समय भी किसी रूप से वैवाहिक जीवन से एक रत्ती भर भी प्रभावित नहीं हो सका और सांसारिक पति की ओर आकर्षित न होकर केवल परमेश्वर को ही अविनाशी पति मान कर ईश्वर भक्ति को ही सर्वोत्तम मानती रही। इस कारण से सांसारिक जीवन इनकी अविरल भक्ति में बाधक सिद्ध हुआ। लगभग दो वर्ष के अन्दर ही इनके वैवाहिक जीवन का अन्त हुआ और मुक्त होकर अपने मां बाप के घर वापिस चली गई।

अपूर्व त्याग अद्भुत वैराग्य

देवीजी मां बाप के घर में भी उग्र तपस्या तथा ईश्वर प्राप्ति में बाधाओं को हटाने के लिए कई बार घर से निकल कर एकान्तवास करना चाहती थी। एक बार की घटना है कि देवी जी महाराज जो कि भरे यौवन से तेज और रूप की राशि थी, अकेले एक सुन्सान पहाडी पर साधना करने लगी। मिट्टी, पत्थर, कंकर और सोने के आभूषणों को समान समझने वाली यह ज्योति स्वरूप नारी अपने सोने के आभूषणों को पहाड़ी पर से फैंक कर साधना में जुट गई। जब घर के सदस्यों को विदित हुआ, तो उन्हें वापिस लौटने के लिए प्रार्थना करने लगे परन्तु देवी जी किसी प्रकार भी वापिस लौटने को सहमत नहीं हुई। जब वे लोग निराश हुए तो एक बुज़र्ग गोजर को इनके पास भेजा। उसने कुछ सामाजिक मर्यादा के विचार प्रकट किए जैसे कि "नारी एक नानवाई की घी वाली रोटी, (काश्मीरी ज़बान में बागिरखानी) जैसी होती है। यदि इसे कमरे में रखा जाय तो चूहे का डर, आँगन में रखा जाय तो कुत्ते का डर, छत पर रखो तो चील का डर होता है।" महाराज जी ने अपने श्रीमुख से कहा कि गोजर की यह सीख मुझे रुपये के अठारह आने सच लगी परन्तु बाहर से गोजर से बोली "मुझे ऐसा भय नहीं दिखाना, मैं केवल नारी का ढांचा नहीं हूँ।" परन्तु अन्त में उन्हें घर वापिस लौटना ही पड़ा।

गुरु प्रसाद

गुरु धारण करने की प्रथा शास्त्रों में बताई गई है। इस प्रथा



विद्वान रहस्यवादी गृहस्थ सन्त
पण्डित श्रीधर जुव कौल (शराबी)—श्रीनगर।

को बनाए रखने के लिए भगवद् कृपा से ही श्रीनगर के सुप्रसिद्ध विद्वान एक रहस्यवादी गृहस्थ संत पण्डित श्रीधर जू शराबी गुरु के रूप में इनके पास प्रकट हुए। गुरु का साक्षात्कार तथा उपदेशों को पाकर महाराज जी अत्यंत प्रफुल्लित हो उठी। गुरु-शिष्य सम्बन्ध का एक उत्तमोतम उदाहरण वर्णन किया जा रहा है। शीतकाल में वेरनाग से लगभग एक कोस दूर जा कर अपने कोमल हाथों से जमे हुए बर्फ को तोड़कर गुरु महाराज की इच्छा पूर्ण करने के लिए निर्मल जल लाती। इस से उन्होंने अपने को एक उच्चकोटि की शिष्या सिद्ध किया। इसी कारण अंत तक इनके नाखून घिसे हुए थे। देवी जी महाराज की शारीरिक गठन की एक विशेषता, अद्भुत और विचित्र अनुभव का भास देती थी। इनके उदर का अगला भाग इनके स्त्रीत्व की गोपनीयता को ढांप कर आगे लटका रहता था। इस कारण से निर्वस्त्र स्नान के समय नि:संकोच इधर-उधर घूमा करते थे।

तपश्चर्या-गुहानिवास

देवी जी महाराज अब पूरे तौर से सांसारिक जीवन से विरक्त होकर एकान्त प्रिय होने लगी। वेरनाग से लगभग तीन कोस की दूरी पर प्राचीन 'ओ३म (वुमव) के मन्दिर में एक वर्ष कठिन तपस्या में लीन हो गई। सामाजिक मर्यादा के अनुसार इनकी माता जी यहां इनकी देखभाल करती थी। माता जी तथा अन्य सम्बन्धियों के आग्रह पर अनिच्छा पूर्वक ही देवी जी महाराज वापिस तो वेरनाग चली आई परन्तु कुछ ही समय के पश्चात् फिर एकान्त की खोज में अपने ननिहाल पोंज़ू गांव के

घने जंगलों में रह कर अपनी अविरल साधना में जुट गई। तीन वर्ष तपस्या के पश्चात् ऐशमुकाम की ओर चल पड़ी। लगभग एक महीना यहां ठहरने के पश्चात् ही इनके सम्बन्धियों ने मर्यादा का वास्ता देकर बहुत विनती करके इनको वापस वेरनाग लाया। यहां पर इनके भाई पण्डित गोविन्द जुव कौल ने वितस्ता के किनारे एक कुटिया बनवाई। वहां पर देवी जी महाराज के आदेश पर एक तहखाना बनवाया गया। अब देवी जी महाराज यहां पर स्वतन्त्रता पूर्वक रहने लगी। तीन वर्ष इस गुफा में कठिन तपस्या में लीन रही। उस समय यहां पर लोगों का आना जाना बन्द था। केवल इनके दो सेवक इनकी सेवा में दिन-रात लगे रहते थे। एक पुरुष सेवक ऋषिदेव दिन में दो बार गौ माता का शुद्ध दूध अति श्रद्धा भाव से गुफा में दिया करता और एक स्त्री सेविका पोशिकुजी इनकी अन्य सेवा किया करती थी। तीन वर्ष घोर तपस्या के पश्चात् जब देवी जी गुफा से बाहिर आए तो इनका मुख-मण्डल कार्तिक पूर्णिमा के चन्द्रमा की आह्लादमय छटा से भरा था जिस की दिव्य शोभा से दर्शनों के लिए एकत्रित हुए भक्त-जन अत्यन्त प्रभावित हुए और स्वत: झूमने लगे। भगवान् शंकर की दिव्य जटाओं की तरह इनके सिर के बाल सिर से पावों तक लटाओं के रूप में ऐसे शोभायमान थे जिनका वर्णन करने में हम अपने को असमर्थ पाते हैं। जब इनकी सेविकाएँ इन्हें नहलाती थी तो महिम्न:स्तोत्र की मन्त्र ध्वनियों से सारा वातावरण गूंज उठता था। लगता था, जैसे भगवान् शंकर जटाओं से बहती गंगा जी की ही अर्चना हो रही हो। इनके शरीर पर जितना निर्मल जल डाला जाता था उतना

ही उनको अपार आनन्द का भास होता था। इनकी निर्मल दीप्ति से कुटिया और इसके आसपास का सारा वातावरण दीप्ति-मान और प्रज्ज्वलित हो उठता था।

परमार्थलाभ—संस्कार विशेष का आयोजन

चिद्विमर्श-पूर्णा धन्या मथरा देवी जी के दर्शन के लिए दूर-दूर से लोग आने लगे और इनके मुखमण्डल को अपूर्व शोभा-निहार कर लोग मंत्रमुग्ध हो जाते थे और उतनी देर जितनी वे इनकी उपस्थिति में रहते थे, अपने सांसारिक दुखों को भूल कर शान्तिपूर्ण रहते थे। देवी जी महाराज ने तीन वर्ष के गुफा वास से निकल कर एक चतुर्वेदी महायज्ञ का आयोजन कराया। इसके साथ-साथ ही पुरुषचरण यज्ञ भी सम्पन्न हुआ। काश्मीर मंडल के प्रसिद्ध विद्वानों और ब्राह्मणों को निमंत्रण दिया गया. जिनमें सुप्रसिद्ध केशव जू भट्ट का नाम उल्लेखनीय है। यह महायज्ञ वेरनाग की पवित्र भूमि पर पन्द्राह दिन चलता रहा जिस शुभ अवसर पर दूर-दूर से लोग आकर सम्मिलित हो गए। इस समय पर विशेष तौर से उल्लेखनीय यह बात है कि देवी जी महाराज ने पुरुषों की तरह यज्ञोपवीत ग्रहण किया। शंकर भगवान् की तरह जटाएँ धारण की, माथे पर त्रिकूटी रेखाएँ खिच गई, भस्म का टीका लगाने से साक्षात शिवस्वरूप में दिखाई दी। शिवो भूत्वा शिवं यजेत—शिव की उपासना शिव बन कर करनी चाहिए। इनका शरीर बर्फ की तरह सफेद, निर्मल, गोलाकार सुगठित और सुन्दर। उस पर सीधा साधा लिबास ऐसा लगता था जैसे शंकर भगवान् ध्यानावस्था में विराजमान हो।

चमत्कारिक जीवन

देवी जी महाराज को अब अन्न ग्रहण करना भी अविरल साधना में उनके लिए बाधक प्रतीत हुआ। उनकी यौवनावस्था में एक दिन जब अष्टमी का व्रत था देवी जी ने अन्न त्याग करने का प्रण लिया परन्तु उस दिन इतना अन्न ग्रहण किया कि उनकी माता जी तथा अन्य परिवार के सदस्य आश्चर्य में पड़ गए। देवी जी ने आन्तरिक ज्वाला को इतना तृप्त किया कि फिर भड़क न उठे। इस समय इनकी आयु लगभग चालीस वर्ष की थी। तब से अन्त तक फलाहारी रहे और स्वयं ही अपने हाथों से बना कर उपस्थित जनों में प्रसाद वितरण करके स्वयं ग्रहण करते थे। सौ वर्ष की आयु तक लगभग ऐसा क्रम चला परन्तु अन्तिम पांच-छ: वर्ष अपनी एक निकटतम शिष्य सोमावती जी के हाथ से ही, जो कि अति श्रद्धा और भाव से इनकी सेवा करती थी, केवल दूध और फल ग्रहण करते थे और प्रतिदिन संक्रान्ति का बहाना करके नमक पर रोक लगाते थे। एक दिन इनके सामने एक माने हुए गृहस्थी सन्त पन्डित जानकी नाथ जी डासी, अनन्तनाग निवासी उपस्थित हुए। श्रद्धालु सेविका सोमावती जी से कहा कि बार-बार नमक पर रोक लगाने का अभिप्राय यह कि है देवी जी महाराज नमक का भी त्याग करना चाहती होगी। फिर अतिम छ: वर्ष नमक का भी त्याग करके केवल फल और दूध पर ही रहने लगे। उनकी शिक्षा सदैव यही होती थी कि 'सीमित मात्रा में लिया हुआ सात्विक आहार आध्यात्मिक उन्नति में सहायक होता है।'

देवी जी श्रीनगर में

पुरुषचरण यज्ञ की समाप्ति के पश्चात् लोग झोंक दर झोंक इनके दर्शन के लिए वेरनाग आते रहते थे। इनके दर्शन मात्र से सुख की अनुभूति होती थी। दर्शनार्थी भक्तों को मनोकामनाएँ पूर्ण होती थी। देवी जी को सिद्ध पुरुष की पदवी प्राप्त थी। अत: सिद्धियाँ स्वयं इनके वंश में थी। इनके चमत्कारों की चर्चा दूर-दूर तक फैल गई यद्यपि यह नहीं चाहते थे कि इनकी चर्चा हो यह अपने को गुप्त रखना चाहती थी। अपने को चर्चा का विषय बनने नहीं देना चाहती थी। इनके गुरु महाराज पन्डित श्रीधर जू शराबी के परमधाम सिधारने के पश्चात देवी जी महाराज गुरु माता के दर्शन के लिए श्रीनगर आए। कनिकदल में स्थित तिक्कू बाग में एक विशाल जन-समूह में एक प्रभावशाली भाषण देकर अमने भक्तों का कल्याण किया। वहां पर काश्मीर मण्डल के सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक कवि वनपोह निवासी श्रीकृष्ण जू राज़दान से भेंट हुई। वह इनके गुरु महाराज के गुरु भाई थे। देवी जी के दर्शन पाकर उन्होंने अपनी वाणी में देवी जी महाराज के चरित्र की स्तुति की, जिसका संग्रह इस पुस्तिका के परिशिष्ट में दिया गया है :-

"म्ये कुकिलि ड्यूठम भस्मा मलिथ वासुक हटे। ओ३म् शिव शम्भू शब्द बोलुन ह्योत-मुत छुन मटे।"

देवी जी पुनः वेरनाग में—वृद्धावस्था

एक बार जब देवी जी महाराज की इच्छा क्षीर भवानी माता राज्ञा के दरबार में जाने की हुई तो उनके श्रद्धालु भक्तों ने अपना सौभाग्य जान कर इनकी इस इच्छा को पूर्ण किया। यह यात्रा करके महाराज जी फिर अपनी जन्म भूमि में स्थित कुटिया में वापिस लौटी। लगभग 65 वर्ष की आयु तक अपनी अविरल शिवभक्ति में लीन हुई। लोगों का आना जाना बराबर चलता रहा। इसी बीच देवी जी अपने कई सेवकों तथा सेविकाओं के साथ स्वामी अमरनाथ जी की शुभ यात्रा के लिए प्रस्थान किया। वहां पर उन्हें वासुकि के रूप में साक्षात् शंकर ने अपूर्व दर्शन दिया और महाराज जी मतवाली होकर कहने लगी 'आयो दर्शन पायो रे, शम्भूनाथ आयोरे' यही रट लगाती रही और वापिस लौटने से स्पष्ट इन्कार करने लगी। जो उनके साथी भक्त थे उन्होंने भी इस अद्भुत दर्शन का लाभ उठाया।

देवी जी पुनः श्रीनगर में—शिवालय धर्म-स्थल का उद्धार

1941-42 ई॰ में श्रीनगर के कई श्रद्धालु भक्तों, सन्तजनों तथा सेवकों के आग्रह पर देवी जी महाराज ने कनिकदल के पास स्थित 'शिवालय' के अस्थापन पर रहना स्वीकार किया। उस समय इस अस्थापन की व्यवस्था बिगड़ी हुई थी। इनकी प्रेरणा से और इन्हीं के निरीक्षण में शिवालय मन्दिर का पुनर्निर्माण

हुआ। मरम्मत का काम भी चलता रहा। आश्रम की व्यवस्था सुधर गई और बहुत सी विधवा नारियों का भी कल्याण हुआ। यहां पर हर वर्ष श्रावण शुक्लपक्ष अष्टमी को देवी जी के गुरुमहाराज का निर्वाण दिवस मनाया जाता था। एक यज्ञ का आयोजन होता था जिसकी समाप्ति पर देवी जी महाराज मार्तण्ड जाकर छड़ी मुबारिक की अति श्रद्धा तथा भाव से उसकी अर्चना करती थी। वहां पर साधु संतों के भोजन का भी प्रबन्ध सुचारु ढंग से होता था। देवी जी महाराज ने काश्मीर में संगम के स्थान पर लगे हुए 'दशहार' की भी यात्रा की। वहां पर भी असंख्य लोग इनके दर्शन के लिए आते रहे।

दुर्गानाग में निवास

शिवालय अस्थापन में कुछ समय रहने के पश्चात् दुर्गानाग के प्रसिद्ध संत स्वामी शिवरत्नगिरि के आग्रह पर देवी जी महाराज दुर्गानाग मन्दिर के पास स्थित कुटिया में रहने लगे। शिवालय अस्थापन के निरीक्षण तथा व्यवस्था का भार एक प्रबन्धक कमेटी को सोंपा। दुर्गानाग अस्थापन में महाराज जी लगभग 20-25 वर्ष रहे। यहां पर भी इनके दर्शन के लिए दूर-दूर से प्रतिदिन लोगों का तांता लगा रहता था यद्यपि इनके शिष्य बनने की इच्छा लोग प्रकट करते थे परन्तु इनकी धारणा यह थी कि उसका उत्तरदायित्व गुरु को उठाना पड़ता है। जिन पर भगवत की अपार कृपा होती थी केवल वही इनके पात्र बनते थे। इस सम्बन्ध में पण्डित शंकर कौल सथू निवासी तथा पण्डित

श्रीधर जुव काचरू के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके श्रीमुख से कई बार यह शब्द निकलते हुए सुना गया है—

"ज्ञान छुन् लङ्ग् प्यठ् टंग परज़् नावुन"

"ज्ञानछुय सत-असत गछि व्यचारुण"

उस समय स्त्री समाज अधिक शिक्षित नहीं होता था। उनके लिए देवी जी लघु कथाओं को सुगम विधियों से सत्-असत्, ज्ञान-अज्ञान तथा नाशी-अविनाशी का बोध कराती थी।

दुर्गानाग में हर वर्ष श्रावण शुक्लपक्ष की अष्टमी को एक महायज्ञ का आयोजन होता था। इस महायज्ञ का आयोजन प्रतिपदा से अष्टमी तक किया जाता था और परमगुरु जी महाराज याने महाराज जी के गुरु महाराज का निर्वाण दिवस के रूप में मनाया जाता था। लगभग सारे काश्मीर मंडल के श्रद्धालु लोग, जिन के मन में विशेष तौर पर महाराज जी का भाव तथा श्रद्धा थी इन आठ दिनों में आया जाया करते थे। "सप्ताह" के नाम से यह दिन सबों को मान्य थे। लगभग सौ की संख्या में शाम को प्रतिदिन भोजन का प्रबन्ध होता था। अष्टमी के दिन पूर्णाहुति पर असंख्य भक्तजन इसमें सम्मिलित होने को उपस्थित होते थे। देवी जी महाराज स्वयं अपने कर-कमलों से नैवेद्य वितरण करते थे। अमरनाथ स्वामी की पवित्र यात्रा के दिन होने के कारण प्रतिदिन सैंकडों भक्त तथा साधु संत और सेवक गण भोजन ग्रहण करते थे।

इहलीला के अन्तिम दिवस वेरनाग में

1965-66 ई० में दुर्गानाग में एक भयंकर आग लगने से बहुत सी धर्मशालाऐं अग्निग्रस्त हो गई। देवी जी की कुटिया भी उन में से एक थी। अपने छोटे भाई पण्डित गोविद कौल के ज्येष्ट सुपुत्र श्री पृथ्वी नाथ के बहुत आग्रह करने पर महाराज जी वेरनाग में स्थित इनके घर में पधारी। परन्तु घर में इनके रहन-सहन तथा नहाने का प्रबन्ध बिल्कुल पृथक था। लगभग 106 वर्ष की आयु तक यहां विराजमान रही। यहां पर भी दूर-२ से विशेष कर श्रीनगर से इनके भक्तजन दर्शनों के लिए सपरिवार आया करते थे। यहां पर पण्डित पृथ्वीनाथ जी का परिवार, विशेष कर उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सोमावती जी 17 वर्ष तन मन से अतिथि सत्कार में लगी रहती थी। सोमावती जी अति श्रद्धा तथा भक्ति-भाव से देवी जी महाराज की दिन-रात सेवा करती थी। पांच जनवरी 1985 ई० शनिवार तदनुसार पौष शुक्लपक्ष चतुर्दशी को पूर्ण चन्द्रमा की छटा से प्रज्ज्वलित शाम के छ: बजे देवी जी महाराज अपने पार्थिव शरीर को त्याग कर अपने सहज-भाव में ब्रह्म-स्वरूप में समा गई।

यह समाचार श्रीनगर रेडियो स्टेशन से शाम के साढे सात बजे जब लोगों ने सुना तो हर जाति, धर्म और वर्ग के लोग झोंक-दर झोंक वेरनाग की ओर देवी जी के अन्तिम दर्शन के लिए चल पड़े और भावपूर्ण अश्रुओं से उनको श्रद्धांजलि अर्पित की। उनका पार्थिव शरीर तीन दिन दर्शन के लिए रखा गया था। भक्तजनों के साथ सब उपस्थित लोग आंखों में आँसू भर-भर कर

देवी जी महाराज का स्मरण करते थे। उनकी जय जयकार ध्वनि से सारा वातावरण गूंज उठा। 'देवी जी अमर रहे' यह करते २ उनके अनगिणत भक्तों ने इनका दाह संस्कार वैदिक रीति के अनुसार इनकी वर्षों पहले बनी हुई कुटिया के बाहिर वितस्ता के किनारे पर किया।

देवी जी की विचार धारा तथा दर्शनिक दृष्टिकोण

देवी जी महाराज की वाणी दार्शनिक-दृष्टिकोण से परिपूर्ण तथा भक्तों को सुख देने वाली थी। उनकी वाणी में उनका दार्शनिक दृष्टिकोण छलकता था। आद्य गुरु शंकराचार्य जी का 'आत्मबोध' उनकी नस-नस में समाया हुआ था।

कई श्लोक जैसे :—

यल्लाभान्नापरो लाभो।
यत्सुखान्नापरं सुखम्।
यज्ज्ञानान्नापरं ज्ञानं।
तद् ब्रह्मेत्यवधारयेत्॥

जिसकी जितनी ग्रहण शक्ति होती थी उसको उसी प्रकार का बोध कराती थी। बाल शिशुओं के साथ इनका वार्तालाप अत्यंत मनोहर तथा प्रिय होता था। अधिकतर बच्चों को पवित्र यज्ञोपवीत धारण करने का अभिप्राय सुगम विधियों से बोध

कराती थी। उन्हें आज्ञाकारी बालक बनने की शिक्षा देती थी। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के चरित्र पर दृढ़ विश्वास प्रकट करती थी। इनकी धारणा थी कि यदि स्त्री किसी पथ पर चलती है तो फिर पीछे नहीं हटती है। स्त्री जो भी रूप ग्रहण करती है पूर्ण रूप से दृढ़ रहती है। परन्तु पुरुष यदि 'विश्वामित्र' के समान महान भी हो फिर भी उस में उतनी दृढ़ता नहीं पाई जाती है। स्त्रियों को यह उपदेश सदैव दिया करती थी कि पर पुरुष के संग से सदा दूर रहना चाहिए। इसके सम्बन्ध में कहा करते थे—

"काव कवस गछि़ पर पुरुषस दूर रोज़ ु न"

इस प्रकार आधुनिक काल में भारतीय संस्कृति और परम्परा पर पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव का विरोध करते थे। इन्होंने सारे जीवन काल में अपनी सेवा का अवसर पुरुष के हाथों नहीं जाने दिया। केवल स्त्री सेविकाएँ ही सेवा का लाभ उठाती थी। अन्तिम क्षणों में भी जब पुरुष डाक्टर ने इनकी कलाई नब्ज़ देखने के लिए पकड़ी तो उस समय भी इनके माथे पर शिकन आ गई। डाक्टर ने यह जान कर एकदम बांह छोड दी। फिर उसी क्षण अपनी शान्त मुद्रा में आ गए।

इनका आसन सदैव स्थिर था। वह कहते थे कि पूर्ण सन्त एक तीर्थ के समान होता है। तीर्थ लोगों के पास नहीं जाते अपितु लोग ही तीर्थ पर चले जाते हैं। उनका कहना था "कि अपने पाँवों में बेडियां डालो और आसन को स्थिर करो। पतंगा बनो, मक्खी नहीं। पतंगा ज्योति पर मरता है, मक्खी का कोई भरोसा

नहीं। कभी मिठाई पर बैठेगी, कभी कूडे-करकट के ढेर पर। ईश्वर में दृढ विश्वास रखना ही वास्तविक आसन है। सदैव सूई का काम करना चाहिए, कैन्ची का नहीं।" भक्तों ने इनके लिए एक आश्रम बनाने का कई बार विचार किया परन्तु इनकी वैराग्य वृत्ति इतनी प्रबल थी कि कभी भी भक्त लोग सफल नहीं हुए। इनका कहना था कि मठधारी बनना कुत्ते की योनि में आने के बराबर होता है। इस कारण से मठधारी कभी नहीं बनना चाहिए। देवी जी पारिवारिक सम्बन्ध के रिश्ते नातों को शारीरिक भाई बन्धु नहीं समझ कर, इस से ऊपर उठ कर सारे संसार से आत्म सम्बन्ध और शाश्वत सम्बन्ध बांधने का उपदेश करते थे।

'वसुधैव कुटम्बकम्'

मान कर समस्त संसार को ही अपना कुटुम्ब समझना चाहिए। जिस प्रकार मीरा सदा श्रीकृष्ण के ध्यान में मग्न रहती थी और सांसारिक वैवाहिक जीवन से विरक्त हो गई थी, उसी प्रकार देवी जी भी सांसारिक दाम्पत्य प्रेम से ऊपर उठ कर केवल अविनाशी शिव के प्रेम में लीन रही, यही उपदेश अपने प्रिय भक्तों को भी हर समय दिया करती थी। बार-बार उनके श्रीमुख से यह वाणी निकलती रहती थी :-

"राजा वज़ीर रानी
सब हो गया फानी
वज़ीर सुबर ज्ञानी

सब हो गया फानी
सागर पहाड भारी
सब हो गया फानी ।"

व्याख्यान करते-करते कभी श्रीमद्भगवदगीता के श्लोकों को तथा सिद्ध सन्त ललेश्वरी के वाक्यों को दोहराना और समझाना इस प्रकार उनका एक आसन पर स्थिर होकर 24 घन्टे धारा प्रवाह चलता था । जैसे :-

"संसार रूपी ता'व छय त'च़'य
मूढन किच़'थ तावन' आये ।
ज्ञान मुद्रा छय यूगियन किच़'य
सु' यूगी यूग' कलि किन्य पज़'नाव्यस ।।"

सत्संग में यह भी कहा करते थे कि राजा के दरबार में अथवा सन्त शिरोमणियों के सामीप्य में उठने बैठने का ढंग आना चाहिए ।

'योगः कर्मसु: कौशलम्'

वास्तविक योग तो कर्मों का सुचारु ढंग से अमल में लाना होता है। महाराज जी को काश्मीर की पुरानी मान्यताओं तथा परम्पराओं में दृढ़ विश्वास था । जब भी कभी बहू बेटियों की चर्चा हुआ करती थी तो कुलवती और गुणवती बहू बेटियां बनने का उपदेश देते थे । इनके वचन मधुर होते थे जो कानों को सुख देने वाले और कल्याणकारी हुआ करते थे । सुनने वाले आनन्द के अथाह

समुद्र में गोते मारते रहते थे। उच्च कोटि की सन्त होने के साथ यह स्वयं परिपूर्ण सिद्ध पुरुष की पदवी पर पहुंची थी। अपने हाथ से बनाया हुआ फलाहार, थोडा सा फल विशेष कर फूल-मखानी इनका प्रतिदिन का आहार होता था। उस समय जो भी इनके सामीप्य में होते थे उन्हें भी अपने कोमल छोटे-छोटे कर-कमलों से प्रसाद वितरण करते थे।

उच्च आध्यात्मिक अवस्था में अवस्थित होकर भी उनके आहार की सावधानी अतुलनीय थी। परन्तु दूसरों को खिलाते तथा खाते उनको अपार आनन्द का भास होता था। इनकी चमत्कारों की चर्चा, जैसे अंधे की आंखों में रोशनी का संचार, असाध्य रोगों का निवारण और संतानहीनों को पुत्र प्र्प्ति दूर-दूर तक फैल गई थी। परन्तु अपने चमत्कारों की चर्चा करना या उनको चर्चा का विषय बनाना ज़रा भी इन्हें अच्छा नहीं लगता था। वे कहते थे मानव मन के लिए यह सबसे बडी प्रेरक शक्ति है। जितनी शक्ति हममें आध्यात्मिक आदर्शों पर चलने से आती है उतनी और किसी से नहीं। इनके पास जो भक्त आते थे इनके श्रीमुख से निकले प्रवचन तथा उपदेश की बातें सुनकर तृप्त हो जाते थे। स्वतः उनकी मनोकामनाएँ भी पूर्ण होती थी। सात्त्विक लोगों के मन में आध्यात्मिक भावनाओं के अंकुर फूट पढते।

देवी जी का अभयदान हमारे साथ

यद्यपि देवी जी महाराज शारीरिक रूप से हमारे सामने

विद्यमान नहीं हैं पर आज भी जो भक्तजन, विशुद्ध, निश्चल, निर्दोष और नि:स्वार्थ अभिलाषा को लेकर अन्त: करण में श्रद्धा और परिपूर्ण भाव से चिन्तन करते हैं उन पर देवी जी का वरद और रक्षक हाथ सदैव रहता है। तो फिर भय किसका ! यह रास्ता देवी जी महाराज का है। यहां किसी शत्रु का भय नहीं। उनके अमृत से भरे हुए उपदेशों का चिन्तन तथा अनुसरण करते हुए विफलताएँ सफलताओं में और दुर्बलताएँ बल में परिणत होंगी। इसका फल निश्चित है, अवश्यंभावी तथा अकुण्ठित हैं।

शिवस्वरूपा मथरा देवी जी का इहलोक जीवन अध्यात्म-निष्ठा और परमार्थ-बोध के कारण सुदृढ रहा। जटा-जूट से सुशोभित तथा गले व कलाई में मोटी रुद्राक्ष मालाएँ धारण कर देवी जी उरगोपवीती शिव के चमत्कारिक रूप से भक्तजनों को आह्लादित करती थी। वह बार-बार वेदान्त-शास्त्रों का हवाला देकर अपने व्याख्यान को समधुर बनाती थी। उन्होंने शास्त्रों का गहन अध्ययन कहां और किन के पास किया था, इस विषय में कोई पता नहीं। परन्तु यह बात स्पष्ट है कि उन्होंने अलक्षेश्वरी रुपभवानी की तरह काश्मीर की अलग-अलग वन-स्थलियों में दीर्घ काल तक दृढ और कठोर तपस्या का व्रत लिए परमार्थ चिन्तन किया और परम योगीश्वरी लल-द्यद की तरह आत्म-विकास का परिचय दिया। जब भी वह जन-समूह में या सत्संग गोष्ठी में बोलने लगती तो आरम्भ तथा अन्त कीर्तन से ही होता। उनकी कोकिला-वाणी और परमार्थ-रस से भरी धुन

'ॐ श्रीमत् नारायणय नारायणय नारायणय ॐ'

आज भी भक्तजनों के सत्वगुणपूर्ण कानों में गूंजती है जिस से उनका मनोबल बढता है और अध्यात्म-निष्ठा में दृढता आ जाती है।

परिशिष्ठ

देवी जी महाराज के श्रीमुख से कहे हुए कुछ वाक्य

जन्मस यिथ म्य' यति क्याह् कोरुम
प'ज़्य पा'ठ्य सत'किन्य दय नो सोरुम
ज़ोनुम न' मंदिन्यस च़ूर फो'रुम
सूर गोम दूर्यर' चान्ये ।०।
दोद छुम जिगरस भाव् कस
दा'र छमन' मुचरिथ हाव' कस
अं'दयुं'म दोद गोम अंदरय
सूर गोम दूर्यर' चान्ये ।०।
दयि सु'न्दि नावु' सूत्य श्राण कर'हा'
अमृत' गङ्गजल धारि चमहा'
मतु' करतम क्रे'जिलि पो'न्य छाने
सूर गोम दूर्यर' चान्ये ।०।
मथरा छि नेरान सा'लुसुय
सत्सङ्ग' आनन्द मालसुय
करतम वोन्य म्योन पाये
सूर गोम दूर्यर' चान्ये ।०।

●

तुल'कतु'र्यु'क लोदुम घर' लो लो
दार' कनि लोगमस मुह' अंधकार
घर' अछ़त' लूभ'कि बर' लोलो
स्वस्वरूप मो'ठ म्य क्याह् कर' लोलो ।०।
ममतायि त्रियि को'रनस खान'दार
दो'पनम विषय भूगन लार
वुछ हवा कर हवस खर' लोलो स्वस्वरूप ।०।

कविश्रेष्ठ श्रीकृष्णजुव राज़दान

आध्यात्मिक प्रमुख सन्त-कवि वनपोह् निवासी श्री कृष्ण जुव राज़दान ने लगभग 60 वर्ष पूर्व अपनी भाव पूर्ण माधुर्य और प्रेम रस से भरी हुई प्रिय भावना युक्त स्नेहमयी भाषा में देवी जी महाराज के समकाल की ही नहीं, अपितु उनके भविष्य जीवन के सम्बन्ध में भी कई सुन्दर पक्षियों की सांकेतिक उपमाएँ देकर उनकी चरित्र लीलाओं का ऐसा संजीव वर्णन किया है जो उनके तत्काल और भविष्य काल दोनों में ही प्रमाणित हो गई है।

लीला प्रस्तुत है :—

म्य' कुकिलि ड्यूठुम भस्म म'लिथ वासुक हटे।
ओ३म शिव शम्भू शब्द बोलुन ह्योतमुत छुन मटे।०।

मंज़ बाग बागन मोरन सू'त्य वन कति नच्
लोलुक ओला यूरुन मंज़ गुफायि अच्
जानावारन निशि लो'ब रूज़िथ पान खटे।०।

दिह अभिमान त्रा'विथ हर दम ज़िन्दय मरे
ध्याना दरे कति वाच्क त' गीता परे
बा'च्न हुन्दिस़ आवुलुनिस मंज़ कति फटे।०।

पन्डिथा अन्दर वुछमस म्य' बिहिथ पन'न्ये घरे
तोतन हुन्द्य पा'ठय कति पुस्तक तु गीता परे
ब्रह्म स्वरे इन्द्रिय सोमरिथ अ'छय वटे।०।

तस मेघवरन पानय प्रयिम' अमृत चावे
यूग'च वुज़ुमलु' ज़गतचि घटि मंज़ गाश हावे

पनु'न्यन तु पर'द्यन मंज़ र'छम'च् मूह'चि् त्र्यटे ।०।

ह्यछन तस निशि हारि तु च्रि क्याह गयि शर्म
क्याह गव करुन मान'यँत्र भाव धर्म त'कर्म
संतोष त'म्यसुन्द वुछिथ'य लूभुक पा'ज़ नटे ।०।

मिथ्या भ्रमस सूर को'रुन मोलुन' सासु'य
भस्मादारु'नि ध्यानु' सू'त्य वार' आराम आसु'य
अद' कमि बापथ हारि आ'लिस मंज़ पान खटे ।०।

तस मोर' मुकुट धारवुन कृपा करे
ओ३म् ज़पिथ भवसरस ह्य'थ पार तरे
रछि ज़न पूत्यन पखन तल दिथ मटि मटे ।०।

छुम बूज़मुत आ'स लूक'भवनस मंज़ अख क'न्या
स्यज़ा'रय पज़'रय सू'त्य वुफि जानावारन छना
त्युथुयवर दितम गरुड़ासन' दुर्गत म्य' हटे ।०।

फल फूल ब्रोंठकुन वात्यस कमि बापथ नच्
कतिज तस निशि ओल बनावनुक वु'पदेश ह्य'छे
घर' कर'नस क्युत तीव्र वैराग्य सामान' रटे ।०।

हंसय रूपी श्रीधर तस अवतार धारे
ककव नेत्रव ब्रह्म-दृष्टि प्रभाव त्रावे
ज़ूना सोज़्यस कृष्णु चन्द्रमु' मंज़ मूह' घटे ।०।

पखन शेरे वुफि खसि यूग ज्ञानचि' हेरे
पत' को'त फेरे कति तीर्थन सा'रन नेरे
रूज़िथ श्रद्धायि शिव शंकर सुन्द दामानु रटे ।०।

गुरुस्तुति

श्रीमती धनवती दर

श्रीमती धनवती दर ने, जो कि महाराज जी की प्रधान शिष्याओं में एक है, गुरु अस्तुति और देवी जी के जीवन काल का संक्षिप्त तौर से योग साधना के आधार पर वर्णन किया है—

(१)

नमस्कार श्री गुरु दीवस नमस्कार

अ'मिस मथरा स्वरूपस म्योन नमस्कार
अ'मिस दिव्य स्वरूपस म्योन नमस्कार

य'हय ब्रह्मा य'हय विष्णु, महीश्वर
य'हय माता पिता धाता य'हय गु'र

ब' भक्ति भाव, किन्य अ'मिस'य शरण छस
ब' पर' तु'ता प्रसन अ'मिस'य करान छस

च़' छख राज़'हंस म्य' रछतम पखन तल
च़' छख परमहंस म्य' दित' आत्मज्ञानुक बल

च़' छख स्वामी म्य' रछतम पान' दासस
च़' छख म्या'ञ नाथ म्य' रछतम अनाथस

दितम तिथिय न्य'थ'र यवय ब' पर्ज़'नावथ
दितम तिछ़ बु'द्ध य'मिय बो'ज़ किन्य ब'ज़ानथ

नमस्कार परम गुरु दीवस नमस्कार
अ'मिस ईश्वर स्वरूपस म्योन नमस्कार।

—●—

(२)

जय जय श्रीमत् ब्रह्म रूप दीवस
मथरा स्वरूपस छु पाद्य प्रणाम ।

ॐ पर गों'डन्यथ गुरु दर्शन कर
पर श्रीमत् श्रीनारायण
वार' मंग पादन तल गुरु दीवस ।०।

मा'सुम ध्रुव कुस शास्त्र ज़ानिहे
पो'श गजेन्द्र ज़ानिहे कु'स' विद्या
तिहुन्दुय अनुग्रह ब'ति कांछ़ान छस ।०।

'कश्मीर' दीशिकिस आग्नेय कूनस
वेरनाग मंज़ अख पन्डिता ओस
श्रीमत् नारायण कौल नाव ओस तस ।०।

नारायण नावस चो'र बो'ड छु मंगल
भाग्यवान छु युस ह्येयि नारायण नाव
दण्डवत् प्रणाम बार बार आ'सिन तस ।०।

हर' हर' करवुन हर नाव सो'रवुन
हर भ'क्त्यन ओस मान करान
हर' नाव सु'रुन' किन्य हर' कौल नाव तस ।०।

भवनीश्वरी बोनिमाल आ'स धर्मवान्
पतिव्रता धर्मस प्यठ ठीकित
दीवी पूज़ायि हं'ज़ आ'स यछ़ पछ़ तस ।०।

यिमन धर्मवानन अमिय कर्मफल' किन्य
महामायायि हुन्द सपद्योख अनुग्रह
यिम'न'य निशि आयि प्रा'दुर्भावस ।०।
प्रकाश अ'स्यसुन्द यामत नो'न द्राव
गो'ड' दो'प कावन आव आव आव
जल व'थ्य पक्षी राग लग्य ग्यवनस ।०।
बुलबुलव आर' क'र्य मंज़ा पोशि वार्यन
ल'ग्य नच़नि बोलान सोऽहंसू
श्रद्धायि किन्य यो'ह्य महावाक्य वो'ननस ।१।
पांद छिय सर्व तीर्थ, पापन गाल'व'न्य
दर्शुन छु चान्यन च़रणन हुन्द
नमो नम: छुस अथ तीर्थ स्वरूपस ।०।
विषय त' वासनायि थ'थु'र त' सु'य हिश
तृष्णा क'ण्ड्य थ'र छे दु'खदायक
व्यच़ार' किलि सूत्य मूल' क'ड़म'च़ छस ।०।
त्यागुक भस्म मो'ल तवय अमि कुकिलायि
वैराग्य रूप त'म्य तवय दोरुय
ज़ोनुन त्याग' मूर्ति यियि ज़न्मस ।०।
भक्तिभाव तोत' न्यूल वस्त्र दा'रिथ
कण्ठस त्रा'विथ माला ना'ल्य
गङ्गाराम लो'ग चो़'र चो़'र वन'नस ।०।
गरुड़ जी वाहन श्री भगवानस
तवय आव तोत' रूप दा'रिथ क्यथ
योह्य स्वरूप छुम गरुड़ महाराजस ।०।

श्रीम् पो'र च़्यंव श्रीमत् हार्यंव
कस्तूर्यंव पो'र नारायण
गुरु कृपायि त्र्यनवय वाक्य प'र्यहस ।०।

मुश्क दार प'तु'र, अ'रिन्य त' मादल
हिय टेक'बट'न्य त' ब्येयि य'म्बुरज़ल
भक्ति भाव' अ'न्द्य अ'न्द्य रूज़िथ स्थानस ।०।

तति गछ़ि य'हय शोभा आसु'न्य
य'ति आसि दीवियि हुन्द प्रादुर्भाव
तवय यि शोभा ब्रोंठ ब्रोंठ आयस ।०।

कुलिम, कारिप'त्य, गुलाब त' आर'वल
जाफुर, पम्पोश त' ब्य'यि मसवल
यहय ज़न्मभूमि छमय गुरुदीवस ।०।

हृदयपीठस अष्टदल वथराव'हस
पद्मासनस प्यठ बेहनावहन
प्राण'चि खसि-वसि गूर'-गूर' करहस ।०।

मन शुद्ध त' शीतल काफूर करहा'
च़यत कर' धूप त' बु'द्ध रतनदीप
श्रद्धा अथव किन्य ब्रोंठकनि आल'वस ।०।

वृक्षव मधुर त' मीठ्य फल वुपदा'विख
ज़ा'निथ यि दीवी करि ब्रत उपवास
तोतिफल फूल' सु'त्य सेवा वात्यस ।०।

कामु'दीनव चो'र दु'द ह'र'रोवुख
क्रुपावती दीवी वा'च् कामु'दीनि निश
अ'म्यसं'ज़ि यछि् ल'ज्य दु'द हु'र'रावनस ।०।

सु'न्दर नदी हुन्द ज़ल ओस पकु'वुन
यिथ' बिंदराबनु' किन्य जमुना
व्ययि यिथ' सरयू अयोध्या दीशस ।०।

सु'न्दर नदी यान्य दीवी पाद ल'ग्य
शब्द तमि त्रोवुय शिव-शिव-शिव
य'ह्'य आराधना कर' अ'मिस दीवस ।०।

पनु'न्यन त' परद्य'न हिशि नज़रि वुछ'वुन्य
शरीर सम्बन्ध ज़ान त' छुन न' ज़ा'नमुत
मु'ख छुन फ्युरमुत ज़गत व्यव्हारस ।०।

ईकान्त रूज़िथ धारणा दिव'वुन्य
ईकान्तस मंज़ रूज़ निरममता
यिथ' आचार्यस अभिनव गुप्तस ।०।

बाल खेल अ'मिसुन्ज़ क्याह आस वैराग्य सोस्त
नम्रतायि भ'रिथ आ'स्य अ'म्यसु'न्दय वाक्य
व्ययन ति बोज़नावान यो'होय व्रत छस ।०।

हृदय आकाश ज्ञान' पवन' सू'त्य भोर'मुत
उपवास' सू'तिन कोर'मुत तृप्त
मनन अ'ग्न आशा-तृष्णा द'ज़मुच् छस ।०।

कन छिस सागर वीद-वाख श्रवणन
श्रवणस छि मनन क'रिथ न्यथ
निदिध्यासन किन्य साक्षातकारस ।०।

मन छुस सु'य्क' ह्यू निर्मल आसु'वुन
सतोगुण प्रकाशि ज़ोनमुत आत्मा
गुण क्याह ग'ंज़रव अ'मिस गुणातीतस ।०।

श्वासन उश्वासन शब्द मिलनोवमुत
कुम्भकस पूरकस रेचकस सान
सोऽहम् शब्द ह्यथ ध्यान'-धारणा छस ।०।

डय'कि जट' छस मुकट ज्ञान दीप्त त्रावु'वुन्य
अ'छिन छिस च्'न्द्रलूकुक ज्ञान प्रकाश
मु'ख छुस सरस्वती वीद-वाक्य वननस ।०।

ज़य दिव'वुन्य भय कासु'वुन्य अथ' छिस
अर्घ' च'न्द्र प्रकाश अथन हु'न्द्य नम
अथि छस माला मन्त्र ज़पनस ।०।

मु'ख' शङ्खस द्युतुन शब्द ॐ नत' सत'
श्वासु' उश्वासु वा'यिन घंटा
सोऽहम् हंस' शब्द' आरति क'रनम ।०।

अंत: करणन बनोवुन से'तार'
प्राणुचि दोयि तारि सू'त्य वोयुन
ॐ श्रीमत् नारायण'च्य रागाह् त्रा'वनस ।०।

प्राणव सू'त्य वैराग्य राग ग्य'व'नस
वु'पप' प्राणव सू'त्य सामवीदच्य ताल
सात्यक विद्यायि सू'त्य प्रणाम को'रनस ।०।

मन रूप गुर विषयण लारवुन
मदहिनि छु दिवान च़यत त' वुद्ध ह्यथ
विवेक'चि रज़ि सू'त्य मार्युक छुन'नस ।०।

अविच़ार दांद मूढ़'-मद फूंकवुन
असत् त' अवगुणक्य ह्यंग गिलवान
शमु' टिक्युल त' गुदामि गण्ड को'रनस ।०।

काम-क्रोध-लोभ-मोह मन'किस बागस
अरखोर कुलिक छिस चो़शवय लङ्ग
वैराग्य मक' सू'त्य च़'टिथ त्रा'विनस ।०।

विषय त' वासु'नायि थ'थ'र त' सु'य हिश
तृष्णा क'ण्ड्च थ'र दु'खदायक
व्यच़ार किलि सूत्य मूल' क'डम'च़ छस ।०।

शुद्ध भाव मथरा ॐ कार मात्रा
य'हय मात्रा छय ओंकार बिंद
पा'र्य लगहस अथ शक्तिरूपस ।०।

अमि बिंद मंज़ छि सा'र सृष्टि द्रामच़्
र्येष, दीव, दीवता त सा'रिय लूक
स्थावर जंगम यि केंह डेशान छस ।०।

सुय बिंद नो'न द्राव अवतार दा'रिथ
शक्ति रूप अथ वेरनागस मंज़
य'ह्य ज़न्मभूमि छम गुरुदींवस ।०।

संसार' दु'ख त' सु'ख छुन ह्यु व'य ज़ोनमुत
ज़गतुक व्यवहार नार ह्यू मोनमुत
रागु देषि निश ब्यो'न मंज़ आत्मध्यानस ।०।

घरबार ज़ोनमुत ओसुन कारागर ज़न
ईकान्त ज़ानान आ'स परमआनन्द
शिशरस ग्रीष्मस मंज़ यखसानस ।०।

शूभिदार वस्त्र अलंकार त्रा'वमु'त्य
क'रम'च़ शरीर'च शोभा त्याग
जटा मुकट' दा'रमुत शेरस ।०।

संसार व्यवहार सम्बन्ध स्नेह
व्य'शियन हुन्द रस ग्यव बनोवमुत
अमि स्नेह रस सूत्य आय'च़ हुम कोरनस ।०।

वैराग्य अग्नुक कलष बेह्नोवुन
ज्ञान चंदुन लोगनस ईंधन
निश्चलतायि हुन्द कलुष बेह्नोवनस ।०।
वैराग्यि अग्नुच अह्वथ दिच़नस
द्वैत राग द्वेषु' दीह अभिमान
संसार व्यवहार पूरणायि दिच़तस ।०।

वैराग्य अग्न गव अमि सू'त्य बलवान
संसारुक मल भस्म को'रनय
पथ मोच़यव निर्मल मंज़ आनन्दस ।०।

ज्ञान-योग त' बैराग्य ह्यथ आ'स आमुच़
सू'तिय आ'सुस ममता त्याग
युथ शुकदीवस त' अष्टावकरस ।०।

मन त' प्राण हंस: काठ मिलना'विथ
मनकनि सोऽहम् ज़खमख ला'गिथ
यूगुक अग्नाह् अमि मंज़ कोडनस ।०।

अथ यूगस मंज़ सर्व कर्म ज़ा'लिथ
प्रान्यन कर्मन भस्म कोरुमुत
पथ अद' मोच़ निर्मल आनन्द'रस ।०।

यिम आ'स्य यिवान अ'म्यसुन्दिस दर्शनस
तिमन ति आ'स ब'डरावान दयसुन्द लोल
सारिन'य लागान भगवत भजनस ।०।

श्रीमान श्रीधरस समयकिस व्यासस
तस ह्यय म्योन प्रणाम त' जय जयकार
सु छु केंह कालुक गोमुत शिव धामस ।०।

श्रीकृष्ण दासस वनपोह निवासस
शेर नो'मरिथ करस पाद्यप्रणाम
गुण क्याह ग'ज़रस गुणातीतस ।०।

गुड' अकि हृति आ'ठि फिरि श्री श्री पर'हस
अद' हयमहा' नाव गुरु महाराजस
विध्न कास्यम यि लीला पर'हस ।०।

द्रोपदी कोब्ज़ायि अर्जन दीवस
यिछ़ दया करनख श्रीकृष्णन
च्यानि दरबार' तिछुय दया मंगान छस ।०।

आ'श्चर बोज़तम त' प्रसन्न रोज़तम
शेर म्योन चान्यन चरणन तल
सतगुरु' चांदा शरणागत छस ।०।



सत्यमाली की श्रद्धाञ्जलि

यह श्रद्धाञ्जलि, गुरु महाराज जी के प्रति उनके अंतर्ध्यान होने के बारहवें दिवस अपने निवास स्थान पर श्रीमती 'सतीमाली' ने अर्पित की। वह मथरा देवी जी की एक शुद्ध भक्ति-पूर्ण शिष्या थी।

नील नाग मंज़ य'लि द्रायख न'न्य
वेरनागस मंज़ दितिथ तस व'न्य
धर्मवान हर कौल क्याह शूभिदार
देवी स्वरूपस छु जय जय कार।०।

शुमशानस प्यठ य'लि ज़ायख
कौल खानदानस मंज़ च़ायख
दारस तिहिन्दिस बन्यव स्वर्गदार।०।

शाबाश तस माजि यस ज़ायख
संसार वुज़'नाव'नि आयख
शूभरोवुथ क्याह् च़'य'य परिवार।०।

दोह खोत' दोह क्याह् छ़ख प्रज़लान
च़'न्द्रम हिश छख च़'य जोतान
धर्मवान हर कौल छु परोपकार।०।

सा'रिय छि यिवान मुबारकस
वुछ्य वुछ्य तिम गछ़ान छिय हरषस
बोन्यिमालि कूरा क्याह शूभिदार।०।

फेर'नि नेर'नि सूत्य बालकन
फेरान छखय जंगलन तु बालन
छांडान आ'सुख गोफ तय गार ।०।

नेरान आ'सु'ख न्यथ प्रबातन
वातान आ'सु'ख वुमव मंदिरस
लोलु पोशन आ'सुख करान अंबार ।०।

अशि वाञि सू'त्य आ'सु'ख गो'ड दिवान
शिव शंकरस आ'सु'ख पूज़ा करान
परान आ'सुख गीता त' महिम्नापार ।०।

भावनायि सूत्य आ'सु'ख पूज़ा करान
धूप दीप रतनदीक आ'सु'ख ज़ालान
वूल्य क्याह आ'सिय करान जानावार ।०।

लोक'ची ओसुय शिवसुन्द लोल
ज़ोनमुत ओसुय यो'होय मा'ज तु मोल
ड्चकि प्यठ नो'न च़'य होवुथ ॐकार ।०।

च़ायख य'लि च़'य गोफाये
त्र्य' कारण रूदिय सेवाए
लक्ष्मी आ'सु'य च़'य' मददगार ।०।

लु'कचिय आ'सु'य सत'चिय प्रय
भविनय जय शिवसुन्ज़ दया छय
ड्चकि छुय त्रिपौण्ड्र क्याह शूमिदार ।०।

सा'रिय छिय करान मान तय भाव
मथु'रा देवी थोवहृय नाव
आयख च् कर'नि धर्म व्यवहार ।०।

त्य'यि वुहु'र्य य'लि गुफायि मज़ा द्रायख
सिरियि चन्द्रम हिश प्रज़लेयख
ब्रह्मा ज़न ओस वनान वीदुक सार ।०।

सा'रिय प्राराण दर्शनसु'य
आकाशि प्यठ' पोशि वर्शनसु'य
आरती छि करान क्याह् शूबिदार ।०।

सिंहासनस प्यठ' च्योन आसन
दीवियि त' दिवता दिवान प्रदिक्षण
ज़ालान धूप दीप वज़ान सेतार ।०।

शिव भस्मुक कोताह् छुय राग
क'रिथ ना सा'रिय अन्न च्.य'य त्याग
चवान आ'सुख दो'द त' करान फलाहार ।०।

न्य'थर चा'ञ छिय पदमु'-प'तु'र
ड्यकस प्यठ छुय च्.यय मुक्त छ'त'र
जटव मंज़ा नेरान गङ्गाधार ।०।

दीवी स्वरूप छसय पूज़ा करान
शिव रूप किन्य छसय पोश लागान
गुरु रूप किन्य भविनय म्योन नमस्कार ।०।

लोल सू'त्य भख'त्य छिय लायान नाद
सीवान चा'ञी पंपोश पाद
प्र'यिम पोशन छिय करान अंबार ।०।

अ'न्दरिम दा'द्य ब'कस भावय
सीन' मुचरिथ कस ब' हावय
लोल सान बोज़तय म्या'न्यी ज़ार ।०।

भक्ति भाव सू'त्य छस पोश सो'म्बरान
तिमनय पोशन माल' करान
ना'ल्य छु'निय पोशि माल' क्याह शूभिदार ।०।

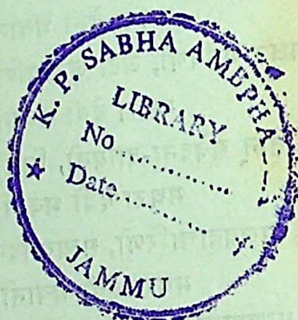
रात द्यन करान आ'सुख स्मरण
अथस क्यथ ज़पमाल' आ'सुख फिरन
ना'ल्य छयय लोदर माल क्याह शूभिदार ।०।



श्रद्धा सुमन

सहसा रुद्राणी, रुद्राक्षमालधारिणी, कठोर तपस्विनी
मथरा देवी भवानी जय जय
घोररूपिणी, विशालकायी, करमालाधारिनी
मथरा देवी भवानी जय जय
वेरनाग भूगर्भधारिता, दुर्गानागशयनी, शिवालय परिसरे वासिनी
मथरा देवी भवानी जय जय
प्रज्वलित नयनी, मधुर भाषिणी, जटा जूट-मण्डिता
मथरा देवी भवानी जय जय
आर्तानांकरुणाकरी, तान् संवेदना-दायिनी, शिवरूपिणी
मथरा देवी भवानी जय जय
यम-नियम पालिनी, बालब्रह्मचारिणी, सत्यवादिनी
मथरा देवी भवानी जय जय
कठोरासने शायिनी, प्राणापान समकरी, अघोर ध्यान धारिणी
मथरा देवी भवानी जय जय
कालकोष्ठके तपस्विनी, मन्त्र-तन्त्र पूर्णकरी, सर्वत: शोधनकारिणी
मथरा देवी भवानी जय जय
नारिजाति भयहारिणी, भवतारिणी, दीक्षा प्रदायिनी, रक्षाकारिणी
मथरा देवी भवानी जय जय
माता शारिका वंशजा, लल्लीश्वरी भाग्यधारिणी काश्मीर
प्रवरेश-रोहिणी
मथरा देवी भवानी जय जय
अद्वैत-शास्त्र-अनुशीलिनी, जानकी पुत्राय वरदायिनी, सदानन्दमयी
मथरा देवी भवानी जय जय

जानकीपुत्र—श्री मोती लाल भान


K. P. SABHA AMBPHA
LIBRARY
No.........
Date.........
JAMMU